

चतुर्थोऽध्यायः

इन्द्रादि देवताओंद्वारा देवीकी स्तुति

ध्यानम्

ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां
शङ्खं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करैरुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् ।
सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं
ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥

‘ॐ’ ऋषिरुवाच* ॥ १ ॥

शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये

तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या ।

सिद्धिकी इच्छा रखनेवाले पुरुष जिनकी सेवा करते हैं तथा देवता जिन्हें सब ओरसे घेरे रहते हैं, उन ‘जया’ नामवाली दुर्गादेवीका ध्यान करे। उनके श्रीअंगोंकी आभा काले मेघके समान श्याम है। वे अपने कटाक्षोंसे शत्रुसमूहको भय प्रदान करती हैं। उनके मस्तकपर आबद्ध चन्द्रमाकी रेखा शोभा पाती है। वे अपने हाथोंमें शंख, चक्र, कृपाण और त्रिशूल धारण करती हैं। उनके तीन नेत्र हैं। वे सिंहके कंधेपर चढ़ी हुई हैं और अपने तेजसे तीनों लोकोंको परिपूर्ण कर रही हैं।

ऋषि कहते हैं— ॥ १ ॥ अत्यन्त पराक्रमी दुरात्मा महिषासुर तथा उसकी दैत्य-सेनाके देवीके हाथसे मारे जानेपर इन्द्र आदि देवता प्रणामके लिये गर्दन

* किसी-किसी प्रतिमें ‘ऋषिरुवाच’ के बाद ‘ततः सुरगणाः सर्वे देव्या इन्द्रपुरोगमाः । स्तुतिमारेभरे कर्तुं निहते महिषासुरे ॥’ इतना पाठ अधिक है ।

तां तुष्टुवुः प्रणतिनम्रशिरोधरांसा
 वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्गमचारुदेहाः ॥ २ ॥
 देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या
 निश्शेषदेवगणशक्तिसमूहमूर्त्या ।
 तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां
 भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ ३ ॥
 यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो
 ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च ।
 सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय
 नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥
 या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः
 पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।

तथा कंधे झुकाकर उन भगवती दुर्गाका उत्तम वचनोंद्वारा स्तवन करने लगे। उस समय उनके सुन्दर अंगोंमें अत्यन्त हर्षके कारण रोमांच हो आया था ॥ २ ॥ देवता बोले—‘सम्पूर्ण देवताओंकी शक्तिका समुदाय ही जिनका स्वरूप है तथा जिन देवीने अपनी शक्तिसे सम्पूर्ण जगत्को व्याप्त कर रखा है, समस्त देवताओं और महर्षियोंकी पूजनीया उन जगदम्बाको हम भक्ति-पूर्वक नमस्कार करते हैं। वे हमलोगोंका कल्याण करें ॥ ३ ॥ जिनके अनुपम प्रभाव और बलका वर्णन करनेमें भगवान् शेषनाग, ब्रह्माजी तथा महादेवजी भी समर्थ नहीं हैं, वे भगवती चण्डिका सम्पूर्ण जगत्का पालन एवं अशुभ भयका नाश करनेका विचार करें ॥ ४ ॥ जो पुण्यात्माओंके घरोंमें स्वयं ही लक्ष्मीरूपसे, पापियोंके यहाँ दरिद्रतारूपसे, शुद्ध अन्तःकरणवाले पुरुषोंके

श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा
 तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥
 किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत्
 किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि भूरि।
 किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि
 सर्वेषु देव्यसुरदेवगणादिकेषु ॥ ६ ॥
 हेतुः समस्तजगतां त्रिगुणापि दोषै-
 र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा।
 सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंशभूत-
 मव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥
 यस्याः समस्तसुरता समुदीरणेन
 तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि।

हृदयमें बुद्धिरूपसे, सत्पुरुषोंमें श्रद्धारूपसे तथा कुलीन मनुष्यमें लज्जारूपसे निवास करती हैं, उन आप भगवती दुर्गाको हम नमस्कार करते हैं। देवि! आप सम्पूर्ण विश्वका पालन कीजिये ॥ ५ ॥ देवि! आपके इस अचिन्त्य रूपका, असुरोंका नाश करनेवाले भारी पराक्रमका तथा समस्त देवताओं और दैत्योंके समक्ष युद्धमें प्रकट किये हुए आपके अद्भुत चरित्रोंका हम किस प्रकार वर्णन करें ॥ ६ ॥ आप सम्पूर्ण जगत्की उत्पत्तिमें कारण हैं। आपमें सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण—ये तीनों गुण मौजूद हैं; तो भी दोषोंके साथ आपका संसर्ग नहीं जान पड़ता। भगवान् विष्णु और महादेवजी आदि देवता भी आपका पार नहीं पाते। आप ही सबका आश्रय हैं। यह समस्त जगत् आपका अंशभूत है; क्योंकि आप सबकी आदिभूत अव्याकृता परा प्रकृति हैं ॥ ७ ॥ देवि! सम्पूर्ण यज्ञोंमें जिसके उच्चारणसे सब देवता तृप्ति लाभ करते हैं, वह स्वाहा आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप पितरोंकी भी तृप्तिका

स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतु-
 रुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥
 या मुक्तिहेतुरविचिन्त्यमहाव्रता त्व*-
 मभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः ।
 मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषै-
 र्विद्यासि सा भगवती परमा हि देवि ॥ ९ ॥
 शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधान-
 मुद्गीथरम्यपदपाठवतां च साम्नाम् ।
 देवी त्रयी भगवती भवभावनाय
 वार्ता च सर्वजगतां परमार्तिहन्त्री ॥ १० ॥
 मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा
 दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा ।

कारण हैं, अतएव सब लोग आपको स्वधा भी कहते हैं ॥ ८ ॥ देवि! जो मोक्षकी प्राप्तिका साधन है, अचिन्त्य महाव्रतस्वरूपा है, समस्त दोषोंसे रहित, जितेन्द्रिय, तत्त्वको ही सार वस्तु माननेवाले तथा मोक्षकी अभिलाषा रखनेवाले मुनिजन जिसका अभ्यास करते हैं, वह भगवती परा विद्या आप ही हैं ॥ ९ ॥ आप शब्दस्वरूपा हैं, अत्यन्त निर्मल ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा उद्गीथके मनोहर पदोंके पाठसे युक्त सामवेदका भी आधार आप ही हैं। आप देवी, त्रयी (तीनों वेद) और भगवती (छहों ऐश्वर्योंसे युक्त) हैं। इस विश्वकी उत्पत्ति एवं पालनके लिये आप ही वार्ता (खेती एवं आजीविका)-के रूपमें प्रकट हुई हैं। आप सम्पूर्ण जगत्की घोर पीड़ाका नाश करनेवाली हैं ॥ १० ॥ देवि! जिससे समस्त शास्त्रोंके सारका ज्ञान होता है, वह मेधाशक्ति आप ही हैं। दुर्गम भवसागरसे पार उतारनेवाली नौकारूप दुर्गादेवी भी आप ही हैं।

श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा
 गौरी त्वमेव शशिमौलिकृतप्रतिष्ठा ॥ ११ ॥
 ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्र-
 बिम्बानुकारि कनकोत्तमकान्तिकान्तम् ।
 अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि
 वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥
 दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटीकराल-
 मुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः ।
 प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं
 कैर्जीव्यते हि कुपितान्तकदर्शनेन ॥ १३ ॥
 देवि प्रसीद परमा भवती भवाय
 सद्यो विनाशयसि कोपवती कुलानि ।
 विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेत-
 नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥

आपकी कहीं भी आसक्ति नहीं है। कैटभके शत्रु भगवान् विष्णुके वक्षःस्थलमें एकमात्र निवास करनेवाली भगवती लक्ष्मी तथा भगवान् चन्द्रशेखरद्वारा सम्मानित गौरीदेवी भी आप ही हैं ॥ ११ ॥ आपका मुख मन्द मुसकानसे सुशोभित, निर्मल, पूर्ण चन्द्रमाके बिम्बका अनुकरण करनेवाला और उत्तम सुवर्णकी मनोहर कान्तिसे कमनीय है; तो भी उसे देखकर महिषासुरको क्रोध हुआ और सहसा उसने उसपर प्रहार कर दिया, यह बड़े आश्चर्यकी बात है ॥ १२ ॥ देवि! वही मुख जब क्रोधसे युक्त होनेपर उदयकालके चन्द्रमाकी भाँति लाल और तनी हुई भौंहोंके कारण विकराल हो उठा, तब उसे देखकर जो महिषासुरके प्राण तुरंत नहीं निकल गये, यह उससे भी बढ़कर आश्चर्यकी बात है; क्योंकि क्रोधमें भरे हुए यमराजको देखकर भला, कौन जीवित रह सकता है? ॥ १३ ॥ देवि! आप प्रसन्न हों। परमात्मस्वरूपा आपके प्रसन्न होनेपर जगत्का अभ्युदय होता है और क्रोधमें भर जानेपर आप तत्काल ही कितने कुलोंका सर्वनाश कर डालती हैं, यह बात अभी अनुभवमें आयी है; क्योंकि महिषासुरकी यह विशाल सेना क्षणभरमें आपके कोपसे नष्ट हो गयी है ॥ १४ ॥

ते सम्मता जनपदेषु धनानि तेषां
 तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः ।
 धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा
 येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥
 धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्मा-
 प्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति ।
 स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादा-
 ल्लोकत्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १६ ॥
 दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
 स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
 दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
 सर्वोपकारकरणाय सदाऽऽर्द्रचित्ता ॥ १७ ॥

सदा अभ्युदय प्रदान करनेवाली आप जिनपर प्रसन्न रहती हैं, वे ही देशमें सम्मानित हैं, उन्हींको धन और यशकी प्राप्ति होती है, उन्हींका धर्म कभी शिथिल नहीं होता तथा वे ही अपने हृष्ट-पुष्ट स्त्री, पुत्र और भृत्योंके साथ धन्य माने जाते हैं ॥ १५ ॥ देवि! आपकी ही कृपासे पुण्यात्मा पुरुष प्रतिदिन अत्यन्त श्रद्धापूर्वक सदा सब प्रकारके धर्मानुकूल कर्म करता है और उसके प्रभावसे स्वर्गलोकमें जाता है; इसलिये आप तीनों लोकोंमें निश्चय ही मनोवांछित फल देनेवाली हैं ॥ १६ ॥ माँ दुर्गे! आप स्मरण करनेपर सब प्राणियोंका भय हर लेती हैं और स्वस्थ पुरुषोंद्वारा चिन्तन करनेपर उन्हें परम कल्याणमयी बुद्धि प्रदान करती हैं। दुःख, दरिद्रता और भय हरनेवाली देवि! आपके सिवा दूसरी कौन है, जिसका चित्त सबका उपकार करनेके लिये सदा ही दयार्द्र रहता हो ॥ १७ ॥

एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते
 कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् ।
 संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु
 मत्वेति नूनमहितान् विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥
 दृष्ट्वैव किं न भवती प्रकरोति भस्म
 सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् ।
 लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता
 इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि तेऽतिसाध्वी ॥ १९ ॥
 खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः
 शूलाग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् ।
 यन्नागता विलयमंशुमदिन्दुखण्ड-
 योग्याननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २० ॥
 दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं

देवि! इन राक्षसोंके मारनेसे संसारको सुख मिले तथा ये राक्षस चिरकालतक नरकमें रहनेके लिये भले ही पाप करते रहे हों, इस समय संग्राममें मृत्युको प्राप्त होकर स्वर्गलोकमें जायँ—निश्चय ही यही सोचकर आप शत्रुओंका वध करती हैं ॥ १८ ॥ आप शत्रुओंपर शस्त्रोंका प्रहार क्यों करती हैं? समस्त असुरोंको दृष्टिपातमात्रसे ही भस्म क्यों नहीं कर देतीं? इसमें एक रहस्य है। ये शत्रु भी हमारे शस्त्रोंसे पवित्र होकर उत्तम लोकोंमें जायँ—इस प्रकार उनके प्रति भी आपका विचार अत्यन्त उत्तम रहता है ॥ १९ ॥ खड्गके तेजःपुंजकी भयंकर दीप्तिसे तथा आपके त्रिशूलके अग्रभागकी घनीभूत प्रभासे चौंधियाकर जो असुरोंकी आँखें फूट नहीं गयीं, उसमें कारण यही था कि वे मनोहर रश्मियोंसे युक्त चन्द्रमाके समान आनन्द प्रदान करनेवाले आपके इस सुन्दर मुखका दर्शन करते थे ॥ २० ॥ देवि! आपका शील दुराचारियोंके बुरे बर्तावको

रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्यमन्यैः ।
 वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां
 वैरिष्वपि प्रकटितैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥
 केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रमस्य
 रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र ।
 चित्ते कृपा समरनिष्ठुरता च दृष्टा
 त्वय्येव देवि वरदे भुवनत्रयेऽपि ॥ २२ ॥
 त्रैलोक्यमेतदखिलं रिपुनाशनेन
 त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा ।
 नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्त-
 मस्माकमुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥ २३ ॥
 शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।

दूर करनेवाला है। साथ ही यह रूप ऐसा है, जो कभी चिन्तनमें भी नहीं आ सकता और जिसकी कभी दूसरोंसे तुलना भी नहीं हो सकती; तथा आपका बल और पराक्रम तो उन दैत्योंका भी नाश करनेवाला है, जो कभी देवताओंके पराक्रमको भी नष्ट कर चुके थे। इस प्रकार आपने शत्रुओंपर भी अपनी दया ही प्रकट की है ॥ २१ ॥ वरदायिनी देवि! आपके इस पराक्रमकी किसके साथ तुलना हो सकती है तथा शत्रुओंको भय देनेवाला एवं अत्यन्त मनोहर ऐसा रूप भी आपके सिवा और कहाँ है? हृदयमें कृपा और युद्धमें निष्ठुरता—ये दोनों बातें तीनों लोकोंके भीतर केवल आपमें ही देखी गयी हैं ॥ २२ ॥ मातः! आपने शत्रुओंका नाश करके इस समस्त त्रिलोकीकी रक्षा की है। उन शत्रुओंको भी युद्धभूमिमें मारकर स्वर्गलोकमें पहुँचाया है तथा उन्मत्त दैत्योंसे प्राप्त होनेवाले हमलोगोंके भयको भी दूर कर दिया है, आपको हमारा नमस्कार है ॥ २३ ॥ देवि! आप शूलसे हमारी रक्षा करें। अम्बिके! आप खड्गसे भी हमारी रक्षा

घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ २४ ॥
 प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
 भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ २५ ॥
 सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
 यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥
 खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
 करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥

ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥

एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसुमैर्नन्दनोद्भवैः ।
 अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ २९ ॥
 भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु * धूपिता ।
 प्राह प्रसादसुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥ ३० ॥

करें तथा घण्टाकी ध्वनि और धनुषकी टंकारसे भी हमलोगोंकी रक्षा करें ॥ २४ ॥
 चण्डिके! पूर्व, पश्चिम और दक्षिण दिशामें आप हमारी रक्षा करें तथा ईश्वरि!
 अपने त्रिशूलको घुमाकर आप उत्तर दिशामें भी हमारी रक्षा करें ॥ २५ ॥ तीनों
 लोकोंमें आपके जो परम सुन्दर एवं अत्यन्त भयंकर रूप विचरते रहते हैं, उनके
 द्वारा भी आप हमारी तथा इस भूलोककी रक्षा करें ॥ २६ ॥ अम्बिके! आपके
 कर-पल्लवोंमें शोभा पानेवाले खड्ग, शूल और गदा आदि जो-जो अस्त्र हों,
 उन सबके द्वारा आप सब ओरसे हमलोगोंकी रक्षा करें ॥ २७ ॥

ऋषि कहते हैं— ॥ २८ ॥ इस प्रकार जब देवताओंने जगन्माता दुर्गाकी स्तुति
 की और नन्दन-वनके दिव्य पुष्पों एवं गन्ध-चन्दन आदिके द्वारा उनका पूजन
 किया, फिर सबने मिलकर जब भक्तिपूर्वक दिव्य धूपोंकी सुगन्ध निवेदन की, तब
 देवीने प्रसन्नवदन होकर प्रणाम करते हुए सब देवताओंसे कहा— ॥ २९-३० ॥

* पा०—पैः सुधूपिता ।

देव्युवाच ॥ ३१ ॥

त्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवाञ्छितम्* ॥ ३२ ॥

देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥

भगवत्या कृतं सर्वं न किञ्चिदवशिष्यते ॥ ३४ ॥

यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः ।

यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥ ३५ ॥

संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः ।

यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥ ३६ ॥

तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धनदारादिसम्पदाम् ।

वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७ ॥

देवी बोलीं— ॥ ३१ ॥ देवताओ! तुम सब लोग मुझसे जिस वस्तुकी अभिलाषा रखते हो, उसे माँगो ॥ ३२ ॥

देवता बोले— ॥ ३३ ॥ भगवतीने हमारी सब इच्छा पूर्ण कर दी, अब कुछ भी बाकी नहीं है ॥ ३४ ॥ क्योंकि हमारा यह शत्रु महिषासुर मारा गया। महेश्वरि! इतनेपर भी यदि आप हमें और वर देना चाहती हैं ॥ ३५ ॥ तो हम जब-जब आपका स्मरण करें, तब-तब आप दर्शन देकर हमलोगोंके महान् संकट दूर कर दिया करें तथा प्रसन्नमुखी अम्बिके! जो मनुष्य इन स्तोत्रोंद्वारा आपकी स्तुति करे, उसे वित्त, समृद्धि और वैभव देनेके साथ ही उसकी धन और स्त्री आदि सम्पत्तिको भी बढ़ानेके लिये आप सदा हमपर प्रसन्न रहें ॥ ३६-३७ ॥

* मार्कण्डेयपुराणकी आधुनिक प्रतियोंमें—‘ददाम्यहमतिप्रीत्या स्तवैरेभिः सुपूजिता।’ इतना पाठ अधिक है । किसी-किसी प्रतियें—‘कर्तव्यमपरं यच्च दुष्करं तन्न विद्महे। इत्याकर्ण्य वचो देव्याः प्रत्यूचुस्ते दिवोकसः ॥’ इतना और अधिक पाठ है ।

ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥

इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः ।
तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ ३९ ॥

इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा ।
देवी देवशरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥

पुनश्च गौरीदेहात्सा* समुद्भूता यथाभवत् ।
वधाय दुष्टदैत्यानां तथा शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ४१ ॥

रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी ।
तच्छृणुष्व मयाऽऽख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥ ह्रीं ॐ ॥ ४२ ॥

ऋषि कहते हैं— ॥ ३८ ॥ राजन्! देवताओंने जब अपने तथा जगत्के कल्याणके लिये भद्रकालीदेवीको इस प्रकार प्रसन्न किया, तब वे 'तथास्तु' कहकर वहीं अन्तर्धान हो गयीं ॥ ३९ ॥ भूपाल! इस प्रकार पूर्वकालमें तीनों लोकोंका हित चाहनेवाली देवी जिस प्रकार देवताओंके शरीरोंसे प्रकट हुई थीं; वह सब कथा मैंने कह सुनायी ॥ ४० ॥ अब पुनः देवताओंका उपकार करनेवाली वे देवी दुष्ट दैत्यों तथा शुम्भ-निशुम्भका वध करने एवं सब लोकोंकी रक्षा करनेके लिये गौरीदेवीके शरीरसे जिस प्रकार प्रकट हुई थीं वह सब प्रसंग मेरे मुँहसे सुनो। मैं उसका तुमसे यथावत् वर्णन करता हूँ ॥ ४१-४२ ॥

* किसी-किसी प्रतिमें 'गौरीदेहा सा', 'गौरी देहा सा' इत्यादि पाठ भी उपलब्ध होते हैं।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये
 शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥
 उवाच ५, अर्धश्लोकौ २, श्लोकाः ३५,
 एवम् ४२, एवमादितः २५९ ॥



इस प्रकार श्रीमार्कण्डेयपुराणमें सावर्णिक मन्वन्तरकी कथाके अन्तर्गत
 देवीमाहात्म्यमें 'शक्रादिस्तुति' नामक
 चौथा अध्याय पूरा हुआ ॥ ४ ॥

